

माटी की मूरतें

श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी

माटी की मूर्तें



श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी

ये माटी की मूर्तें

जब कभी आप गाँव की ओर निकले होंगे, आपने देखा होगा, किसी बड़ या पीपल के पेड़ के नीचे, चबूतरे पर कुछ मूर्तें रखी हैं- माटी की मूर्तें!

ये मूर्तें-न इनमें कोई खूबसूरती है, न रंगीनी। फलतः बौद्ध या ग्रीक रोमन मूर्तियों के हम शैदाई यदि उनमें कोई दिलचस्पी न लें, उन्हें देखते ही मुँह मोड़ लें, नाक सिकोड़ लें तो अचरज की कौन सी बात?

किंतु इन कुरूप, बदशकल मूर्तों में भी एक चीज़ है, शायद उस ओर हमारा ध्यान नहीं गया, वह है जिंदगी! ये माटी की बनी हैं, माटी पर धरी हैं; इसीलिए जिंदगी के नज़दीक हैं, जिंदगी से सराबोर हैं। ये देखती हैं, सुनती हैं, खुश होती हैं; शाप देती हैं, आशीर्वाद देती हैं।

ये मूर्तें न तो किसी आसमानी देवता की होती हैं, न अवतारी देवता की। गाँव के ही किसी साधारण व्यक्ति-मिट्टी के पुतले-ने किसी असाधारण- अलौकिक धर्म के कारण एक दिन देवत्व प्राप्त कर लिया, देवता में गिना जाने लगा और गाँव के व्यक्ति-व्यक्ति के सुख- दुःख का द्रष्टा-स्रष्टा बन गया।

मिट्टी के उन पुतलों की ये माटी की मूर्तें! हाँ, ये देखती हैं, सुनती हैं; खुश होती हैं, नाराज़ होती हैं। खुश हुई-संतान मिली, अच्छी फसल मिली, यात्रा में सुख मिला, मुकदमे में जीत मिली। इनकी नाराज़गी-बीमार पड़ गए महामारी फैली, फसल पर ओले

गिरे, घर में आग लग गई।

ये ज़िंदगी के नज़दीक ही नहीं हैं, ज़िंदगी में समाई हुई हैं। इसलिए ज़िंदगी के हर पुजारी का सिर इनके नज़दीक आप-ही-आप झुका है। बौद्ध और ग्रीक-रोमन मूर्तियाँ दर्शनीय हैं, वंदनीय हैं; तो माटी की ये मूर्तें भी उपेक्षणीय नहीं, आपसे हमारा निवेदन सिर्फ इतना है।

आपने राजा-रानी की कहानियाँ पढ़ी हैं, ऋषि-मुनि की कथाएँ बाँची हैं, नायकों और नेताओं की जीवनियों का अध्ययन किया है। वे कहानियाँ वे कथाएँ वे जीवनियाँ! कैसी मनोरंजक, कैसी प्रोज्ज्वल, कैसी उत्साहवर्द्धक! हमें दिन-दिन उनका अध्ययन, मनन, अनुशीलन करना ही चाहिए।

किंतु, क्या आपने कभी सोचा है, आपके गाँवों में भी कुछ ऐसे लोग हैं, जिनकी कहानियाँ, कथाएँ और जीवनियाँ राजा-रानियों, ऋषि-मुनियों, नायकों-नेताओं की कहानियों, कथाओं और जीवनियों से कम मनोरंजक, प्रोज्ज्वल और उत्साहवर्द्धक नहीं। किंतु शकुंतला, वसिष्ठ, शिवाजी और नेताजी पर मरनेवाले हम अपने गाँव की बुधिया, बालगोबिन भगत, बलदेव सिंह और देव की ओर देखने की भी फुरसत कहाँ पाते हैं?

हज़ारीबाग सेंट्रल जेल के एकांत जीवन में अचानक मेरे गाँव और मेरे ननिहाल के कुछ ऐसे लोगों की मूर्तें मेरी आँखों के सामने आकर नाचने और मेरी कलम से चित्रण की याचना करने लगीं। उनकी इस याचना में कुछ ऐसा जोर था कि अंततः यह